आत्मविद्या ।

अर्थात्

मिसमेरिजम् और स्पिरचुअलिजिम् का

सारांश ॥

धर्मप्रचारक आचार्य

श्रीमधुसूदन गोस्वामी संग्रथित ।

काशी ।

भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुई ।

सन् १८९९ ई० ।

दूसरी बार १०००] [मूल्य ।)

अजी साहब सुनिये तो !

मैंने ३४ के सम्वत् में अपने एक मित्र से इस विद्या का नाम सुना था बस तब ही से चुभ गई थी, फिर तो बड़े बड़े कष्ट और परिश्रम से बड़ा धन व्यय कर बड़ी दूर जा जा कर इसका तत्व समझा अनेक तो मुझे इस विषय में देख कर विक्षिप्त जानते हैं कोई अन समझ और भोला भी कहते हैं परन्तु कोई धगड़ कहते हैं कि यह जान बूझ कर प्रतारणा को इसका आश्रय लेते हैं । ऐसी ऐसी बातों से हृदय इस के प्रकाश करने को न था परन्तु स्वभाव ऐसा दुष्ट है जो देखता वा समझता है छिपा नहीं सक्ता अस्तु इस अनात्मवादप्रधान समय में प्रथम तो इस में रुची ही न होगी इस पर भी यदि कोई क्षुद्र कलेवर इस पुस्तक को ले कर कुछ करने को कमर बाधें उन से अनुरोध है यदि रह जाय वा अधिक अनुभव हो तो मुझे लिखें जिससे द्वितीय संस्करण में पुस्तक और भी प्रमाणित हो जाय।

[ग्रन्थकार]

ॐ

आत्मविद्या।

प्रथम भाग

मिसमेरिज़म्।

निर्वाचन।

मिसमेरिज़म विद्या के दो भेद हैं (१) क्यूरेटिव और (२) फिनोमिनेल। क्यूरेटिव नाम उस शक्ति का है जिससे रोग निवारण होता है और "फिनोमिनेल" उसे कहते हैं जिससे अनेक अलौकिक व्यापार सिद्ध होते हैं। इससे हम भी अब इनके लिये दो सांकेतिक शब्द बनाते हैं। 'रोग निवारक' और 'अलौकिक व्यापार साधक'। इन दोनों में परस्पर विलक्षण सम्बन्ध है एक में पारदर्शी होने से दूसरे में भी प्रवेश आवश्यक होता है एक विषय में कुछ भी ज्ञान होने से दूसरे का ज्ञान अनायास प्राप्त होता है परन्तु चमत्कार यह है कि जो रोग निवारक अंश में सामर्थ्य रखता है वह अलौकिक व्यापार साधक में असमर्थ होता है और जो अलौकिक व्यापार साधक में कुशल होता है वह रोग निवारक में कृतकार्य नहीं होता है। बिरले ऐसे भी होते

हैं जो दोनों अंश में पारंगत होते हैं। अब हम यहां रोग निवारक का वर्णन न करेंगे वह 'चमत्कारचिकित्सा' नाम से भिन्न पुस्तक लिखी हैं यहां अलौकिक व्यापार साधक का विवरण करते हैं।

सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने मनुष्य शरीर में अचिन्त्य और आश्चर्य शक्ति का बीज रोपण किया है जिस से मनुष्य अपने आत्मा की उन्नति और परोपकार कर सके, जिस प्रकार आंख से देखना कान से सुनना पैर से चलना हाथ से उठाना धरना होता है इसी प्रकार इच्छा शक्ति और मन की एकाग्रता से परोक्षदर्शिता (गैबबीनी) वा, भावैक्य (शरकत खयाल) प्राप्त होता है, बस हम यदि परोक्ष की बात जान लें और दूसरे के हृदय की बात जान लें तो इस से अनन्त उपकार होना सम्भव है। अनेक लोगों का मत है कि मिस्मेरिज़म केवल ठगई है ऐसा कभी हो ही नहीं सकता है कि कोई दूसरे के मन की वा परोक्ष की बात जान सके! इसका उत्तर यही है कि पूर्वकाल में यह विद्या भारतवर्ष में अच्छे प्रकार प्रचलित थी इसी के बल से ऋषि और ब्राह्मण लोग संसार को हस्तामलक देखते थे परन्तु अब विद्या का प्रचार नहीं रहा है इस से हम यही उत्तर यथार्थ समझते हैं कि प्रथम अध्यवसायपूर्वक इसकी परीक्षा कर लें तब मिथ्या कहें तो ठीक होगा। दूसरा

उत्तर यह है कि मनोयोग से गूढ़ बातें सब जानी जाती हैं; जैसा कि "तुम यदि किसी पुस्तक को पढ़ते हो उसका तात्पर्य्य तुम्हारी दृष्टि में न आवे तो तुम थोड़ा मनोयोग से पढ़ो तो सब समझ जाओगे। कहीं दूर [illegible] हो रहा है तुमको अव्यक्त ध्वनि जान पड़ती है और कुछ नहीं, परन्तु थोड़ा मनोयोग करने से तुमको अब उस ध्वनि में दो चार शब्द समझ पड़ने लगे और भी मनोयोग किया तो समस्त वाक्य समझने लगे और भी थोड़ा मनोयोग किया तो उसका अर्थ भी ज्ञात होने लगा; बस ऐसे अनेक दृष्टान्त हैं कि मनोयोग से सब कुछ जाना जाता है और यदि तुम्हारा मनोयोग और तरफ हो तो हमने जो कुछ कहा कुछ भी न समझ में आवेगा और फिर तुम कहोगे "हां फिर कहिये? मेरा मन और तरफ था. बस! अब तुम जान गये होओगे कि मनोयोग ही से ज्ञान होता है और मनोयोग का कारण मन की एकाग्रता है। इसको भी उदाहरण से समझियेगा? अच्छा यह लीजिये तुम किसी पाठ को याद करना चाहते हो तो उसे बेर बेर आवृत्ति करो परन्तु पचास बार आवृत्ति करने से जो फल होगा चार बार लिखने से वही होगा कारण इसका यह है कि आवृत्ति करने की अपेक्षा लिखने में अधिक मन को एकाग्र करना पड़ता है। बस जब मनोयोग से सब

गूढ़ बातें जानी जाती हैं तो सुतरां यह सिद्ध हुआ कि दृढ़ मनोयोग से परोक्षदर्शिता भी प्राप्त हो सकती है। अब यदि यहां इस विद्या की सत्यता स्थापन करने को तर्क वितर्क [illegible] वृथा पुस्तक भर जायगी इसलिये प्रयोग के नियम सं[illegible]हते हैं जिससे सब कोई परीक्षा करके देख सके, इसमें जाति कुल धर्म का कोई बन्धन नहीं है सिविल सर्विस, वा मिडल, इन्ट्रेंस, बी० ए० प्रभृति का कोई नियम नहीं है जो चाहे सो करके देख ले!

अब इन तीन शब्दों के संकेतों को यहां जान लो और खूब याद रक्खो (१) प्रयोक्ता (२) प्रयोज्य (३) प्रयोग। प्रयोक्ता उसे कहेंगे जो मिसमेरिज़्म करनेवाला है। प्रयोज्य उसे कहेंगे जिस पर विद्या चलाई जाती है, उसका एक और नाम "पात्र" भी है। प्रयोग उस क्रिया को कहेंगे जिसके द्वारा यह व्यापार साधन होता है।

उपक्रम।

एक पुरुष दूसरे मनुष्य को बेहोश और स्वाधीन कर सके इसमें प्रथम मुझे भी विश्वास न था परन्तु कौतुक वश कुछ सुन सुना कर प्रयोग करता था इसी समय एक दो पुस्तकें हाथ आ गईं उनसे कुछ तत्व मिला अब उत्कण्ठा और भी बढ़ी, दैवात् दो तीन ज्ञातविद्यों का साक्षात् हुआ

उन्होंने प्रत्यक्ष प्रयोग कर दिखाया और निगूढ़ शिक्षा भी मिली अब तो हम स्वयं प्रयोक्ता ही निकले अस्तु इस तूल तुमुल से कुछ प्रयोजन नहीं, हमारे लिखित प्रकार का अवलम्बन कर देखिये क्या होता है।

स्वरूप।

प्रत्येक मनुष्य के शरीर में एक प्रकार की तड़ित् शक्ति (एलेक्ट्रेसिटी) है उसके प्रभाव से शक्ति चालना होती है। यह तड़ितशक्ति और इच्छाशक्ति एकही पदार्थ है, इच्छाशक्ति की परिचालना के लिये साधन करना होता है। वह साधन केवल मनोयोग है। अर्थात् मन में बहुत देर तक और सब सङ्कल्प विकल्प छोड़कर एकही अर्थ की चिन्ता करना, बस इसी से तुम दूसरे पुरुष को "मुग्ध" कर सकोगे परलोक गत आत्मा को आवाहन कर सकोगे परोक्ष का वृत्तान्त जान सकोगे। और और भी आश्चर्यव्यापार साधन कर सकोगे। इसलिये तुमको प्रथम 'मनोयोग' में अभ्यास करना चाहिये। यदि च मनोयोग ही इच्छा के परिचालन का कारण है तथापि इसके दो और सहकारी कारण हैं उनको भी अभ्यास करना होगा एक 'दृढ़ दृष्टि' और दूसरा 'पास'। दृढ़ दृष्टि का यह तात्पर्य है कि बहुत देर तक निर्निमेष दृष्टि से एक चीज़ को देखते र-

हना यह भी शनैः शनैः साधन करना होगा और 'पास' दो प्रकार का है १ प्रवर्तक २ निवर्तक, प्रथम के द्वारा पात्र के शरीर में क्रिया की प्रवृत्ति होती है और दूसरा तुम्हारी की हुई क्रिया को निवृत्त करेगा। बस, जिसको साधन द्वारा यह शक्तित्रय अभ्यस्त हो गया है वह पूर्ण प्रयोक्ता है उसके पात्र यदि रावण वा भीमसेन हैं तो वह उनको भी मुग्ध और स्वाधीन कर सकता है।

प्रयोक्ता।

यदि तुम प्रयोक्ता बनो तो तुमको नीचे लिखे नियम प्रतिपालन करना आवश्यक है।

तुमको यह दृढ़ विश्वास चाहिये कि मैं ऐसा कर सकूंगा। यदि कुछ भी सन्देह हुआ तो कार्य्य सुफल न होगा कारण इसका यह है कि विश्वास से तुम्हारा मन सबल रहैगा, एकाग्र रहैगा उसकी शक्ति बढ़ैगी। और रंचमात्र भी सन्देह होने से (करते तो हैं जानें होगा वा नहीं) मन दुर्बल हो जायगा इच्छा शिथिल हो गई बस फिर क्या होना है, फिस्स !

२—अध्यवसाय चाहिये अर्थात् यदि पात्र के मुग्ध होने में विलम्ब हो तो निराश मत हो और दूसरे प्रकार से प्रयोग करो इस पर भी न हो तो और पात्र पर करो।

३—किसी से कुछ धन लेने को वा पापप्रवृत्ति चरितार्थ करने की अभिलाषा मन में रख कर मत प्रवृत्त हो क्योंकि यह एक ईश्वरीय नियम है कि मनुष्य में जो मनुष्य के वश करने की शक्ति है वह उपकार और हित के लिये है यदि दुर्भावना से किसी को "मुग्ध" या स्वाधीन किया चाहोगे तो वह कभी न होगा।

४—अपनी बहादुरी दिखाने को वा लोक में प्रशंसा पाने को कभी प्रयोग मत करो क्योंकि ऐसा करने से अभिमान बढ़कर कुछ शक्ति खर्च हो जाती है।

५—केवल परमेश्वर की अचिन्त्य महिमा विचारने को और परोपकार की दृष्टि से प्रयोग करो।

६—खेल तमाशे के लिये प्रयोग मत करो विद्या के मानरक्षा और गौरव पर दृष्टि रखनी चाहिए।

७—जब तक तुम पूर्ण प्रयोक्ता नहीं हो और पात्र तुम्हारे आधीन नहीं है तब सभा में प्रयोग मत करो क्योंकि यदि प्रयोज्य गोलमाल, वा लोगों के कहने सुनने से अन्य मत हो जाय तो तुम सहस्र चेष्टा से भी कृतकार्य न हो सकोगे परन्तु पूर्ण अभ्यास और पात्र शिक्षित * होने से लक्ष

* शिक्षित से यह तात्पर्य है कि सर्वथा नवीन न हो जिसपर एक बेर भी प्रयोग हो चुका है वह शिक्षितही है।

लक्ष जन समुदाय में भी तुम धीर गंभीर भाव से बड़े बड़े चमत्कार कर सकते हो।

८—तुम जब परम स्वस्थ अवस्था में हो तब प्रयोग करो क्योंकि यदि तुमको कुछ भी व्याधि होगी तो वह प्रयोज्य को चतुर्गुण हो जायगी।

प्रयोज्य।

१—जब तुम प्रथमही प्रथम प्रयोग करो तब किसी बालक वा स्त्री को पात्र बनाओ क्योंकि अपने से दुर्बल पर शीघ्र और थोड़े परिश्रम से प्रयोग होता है।

२—प्रयोज्य की अवस्था ९ वर्ष से कम न होनी चाहिए।

३—प्रयोज्य सच्चरित्र साधु अपाखण्डी और अनुद्दण्ड होना चाहिए।

४—वह तुम्हारे प्रयोग को हृदय से अपने ऊपर होना चाहता हो, ऐसा न होने से बड़ा कठिन पड़ेगा।

५—किसी संक्रामक रोगवाले पर * वा हृदय के रोग वाले पर प्रयोग मत करो। संक्रामक रोगवाले पर करने से वह रोग तुमको हो जायगा और हृदय के रोगवाले पर करने से उसको बड़ा कष्ट होगा।

* मैंने एक बार एक सिर दर्दवाले पर प्रयोग किया था सो उसको तो आराम हो गया किन्तु मैं चार घंटे तक सिरदर्द से व्याकुल रहा।

६—स्त्री पर, काले रंग के पुरुष पर, जिसका सिर छोटा हो ऐसे पुरुष पर प्रयोग शीघ्र होता है।

प्रयोग।

इसके करने के कई प्रकार हैं। उन में से स्वानुभूत मुख्य कई एक यहां प्रदर्शित होते हैं। प्रथम पात्र को एक कुर्सी पर बैठाओ कोई कोई एक थोड़ो ऊँची चौकी पर खड़ा करते हैं परन्तु सर्वोत्तम यह है कि पात्र को पलंग, मंच, वा तखत पर शयन कराओ। उसका शिर दक्षिण दिशा में रहे वस्त्र उसके ऊपर अधिक न हो मोटा वा कलपदार कपड़ा तो कभी न चाहिए यदि गर्मी हो तो जिधर से पवन आता हो उधर सिर करो जिसमें मक्खी मच्छड़ पात्र को उद्विग्न न करें। खुले में प्रयोग मत करो। पात्र पर पंखे की हवा भी मत करो। चाहो तो मसहरी लगा सकते हो। रात्रि में ८ या १० बजे पीछे ही प्रयोग करना अच्छा है क्योंकि उस समय जनरव नहीं होता है। और यदि तुम्हारे प्रयोग करने के घर में दो चार मनुष्य और हों तो वे पुकार कर न बोलने पावें, यही नहीं परन्तु कानाफुसफुस भी न करने पावें, मनुष्य का शब्दही पात्र के मन को विशेष विचलित करता है इस बात पर दृष्टि रख कर कार्यारम्भ करना।

१—अब तुम धीर गंभीर भाव से जिस कार्य को प्रवृत्त होते हो उसके पूर्ण होने का बल परमेश्वर से प्रार्थना कर पात्र के दाहनी ओर बैठो। *

२—पात्र को भी सब सङ्कल्प बिकल्प छोड़ कर परमेश्वर का स्मरण करने को कहो अथवा तुम्हारे प्रयोग को अपने ऊपर होना बिचारने को कहो।

३—यदि पात्र नया हो तो तुमको ऐसी भाव भंगी करनी चाहिए कि यह तुमको दैवी शक्ति है कि तुम चट उसे मुग्ध कर लोगे।

४—तुम पात्र के दाहने हाथ को अपने बांयें में और उसके बांयें हाथ को अपने दाहने हाथ से इस प्रकार पकड़ो कि पात्र के अँगूठे तुम्हारी मुट्ठियों में रहैं और तिस पर भी तुम्हारे अंगूठों का तलदेश उसके अँगूठों के पृष्ट पर रहे। और तुम निर्निमेष तीव्र दृष्टि से पात्र की दृष्टि को देखो।

५—पात्र से भी अपनी दृष्टि के तारा पर दृष्टि बाँधने को कहो।

६—तुम यदि पात्र की दोनों आंखें न देख सको तो एकही आंख देखो।

---

* यदि पात्र कुर्सी पर बैठा वा खड़ा होगा तो तुमको खड़े होकर प्रयोग करना होगा।

७—तुम्हारी और पात्र की आंखों में एक बिलस्त से अधिक बीच न रहे। *

८—यदि पात्र शयन किये है तो तुमको थोड़ा झुकना अवश्य होगा तुम दाहिनी कोहनी टेक कर बैठ सकते हो, सुबिधा हो तो तकिया भी लगा सकते हो परन्तु पात्र के सिर में तकिया मत लगाओ यदि उसको बिना तकिया लेटने का अभ्यासही न हो तो थोड़ा कपड़ा लपेट कर धर दो।

९—थोड़ी देर तक इस प्रकार करने से तुम्हारे और पात्र के हाथों का ताप समान हो जायगा ताप साम्य में कभी १० मिनट लगते हैं कभी २०। ३० और कभी दो मिनट में भी हो जाता है।

१०—अब तुम पात्र के दोनों अँगूठों को अपने बांये हाथ से पकड़ लो † और दाहिने हाथ से "पास" देना प्रारम्भ करो। हमारे देश में जो मंत्र पढ़ कर झाड़ा देने की प्रथा है "पास" देना उसी प्रकार है अर्थात् अपने हाथ

* यह प्रथम अभ्यासकारी को है फिर तो दो चार गज़ की दूरी से देख कर भी प्रयोग हो सकता है।

† प्राय: अँगूठे छोड़कर दोनों हाथ से भी पास देते हैं (मैं दो हाथ से ही देता हूं)

को फैला कर अँगुली सब भिन्न भिन्न कर * थोड़ी नवा कर हथेली पात्र के शरीर के तरफ रख कर सिर से पाँव तक हाथ को धीरे २ उतारो जहां तक हो सके शरीर के पास हाथ रहे तुम्हारे हाथ में और पात्र के शरीर के महीन कागज़ वा बाल के बराबर अन्तर रहे † परन्तु हाथ शरीर से छू न जाय (याद रक्खो यह प्रवर्तक पास हुआ)।

११—यदि पात्र कुर्सी पर बैठा वा खड़ा होगा तब तुमको दोनों हाथों से पास देना होगा दोनो हाथ से "पास" देने के समय दोनों हाथों के अँगूठे परस्पर सँाट लेने से श्रम नहीं पड़ता है ।

१२—पास देना अभ्यास न होने से १०।२० पास देतेही तुम क्लान्त हो जाओगे इसलिये किसी लम्बे तख्ते पर वा भीत में मनुष्य की मूर्ति लिख कर वा कल्पना कर 'पास' देना अभ्यास कर लेना चाहिये।

१३—अब यदि तुम देखो कि पात्र की आंखों में जल भर आता है वा उसकी पलक शीघ्र २ पड़ने लगों तो उसे छोड़ दो ऐसे पात्र को सहस्र उपाय से भी तुम मुग्ध न कर सकोगे ।

* अनेक लोग अंगुली मिला भी लेते हैं।

† यह एक बात मात्र है तात्पर्य निकट रहने से है।

१४—यदि तुम देखो कि पात्र की आंखें झुकी आती हैं और निद्रावेश सा होता आता है तो तुम अपनी आंखें धीरे २ मीचो, पात्र भी वैसेही मींचता जायगा, तुम फिर खोल कर देखो उसकी आंखें मिची हुई हैं बस अब तुम जैसा कहोगे वह वैसा ही करेगा वह सर्वथा तुम्हारे आधीन हो सकेगा।

१५—अब तुम फिर झड़ाझड़ पास दे चलो परन्तु सावधान रहो कि "निवर्त्तक पास" न लग जाय अर्थात् जिस प्रकार सिर से पैर तक हाथ उतार लाये हो फिर कहीं ऊपर हाथ ले जाते समय पैर से सिर तक उलटी पास न लगे क्योंकि यह जगाने की पास है ऐसा करने से श्रम वृथा होगा, जो क्रिया "प्रवर्तक पास" द्वारा तुमने की है वह सब इससे निवृत्त होती जायगी। इससे जब तुम ऊपर को हाथ ले जाओ तब मुट्ठी बाँध कर बगल से ऊपर ले जाओ सिर पर ले जाकर मुट्ठी खोल कर "पास" देते चले आओ जब पैर के पास तक हाथ आ जाय तब फिर मुट्ठी बाँध कर बगल से ऊपर ले जाओ। जब दोनों हाथ से पास देते हो तब माथे के पास से मिले हुए हाथ पैर तक ले जाकर दोनों मुट्ठी बाँध लो और दोनों बगल से ऊपर ले जाओ और सिर के पास दोनों हाथ मिला कर फिर पास दो। ऐसा पास देना प्रथम कुछ कठिन होगा

परन्तु अभ्यास हो जाने से फिर कुछ मालूम न होगा। सिर से पैर तक ही "पास" देने का कोई नियम नहीं है नाभि तक वा वक्षस्थल तक वा कंठ तक ही पास देने से काम चल जायगा। यह सब तुमको इस कार्य में थोड़ा अग्रसर होते ही आप ज्ञान हो जायगा।

१६—तुम पास दे रहे हो पात्र का शरीर स्तब्ध काष्ठ तुल्य हो गया है हाथ पैर यदि उठाकर छोड़ते हो धप से लकड़ी के तरह गिर पड़ता है कण्ठ घड़ घड़ करने लगा है स्वास दीर्घ वा स्तब्ध हो गया है अब तुम किसी दूसरे मनुष्य से कहो पात्र का नाम लेकर पुकारे। यदि पात्र उस शब्द से बोले तो फिर "पास" दो जब पात्र और के शब्द से न बोले केवल तुम्हारे ही शब्द से बोले तब जानो ठीक हो गया।

१७—यदि तुम्हारे शब्द से भी पात्र न बोले तब जानो कि घोर निद्रा में है अब उसको बिरक्त मत करो थोड़ी देर सोने दो तब तक तुम भी थोड़ा बिश्राम कर फिर प्रस्तुत हो जाओ।

१८—अब दो चार "निवर्तक पास" देकर पूछो यदि पात्र बोले तब जानो "स्वाप्निक" हुआ।

१९—तुम प्रथम पात्र से यही पूछो कि प्रयोग उसके अनुकूल है कि नहीं? वा इससे उत्तम प्रणाली प्रयोग क-

रने को वह और बता सकता है ? उसकी शक्ति किस २ काम की है ? वह कितनी देर तक इस अवस्था में रहने से श्रान्त न होगा इत्यादि इत्यादि ।

२० – सन्तोषदायक उत्तर प्राप्त होकर पात्र के कथनानुसार जिस कार्य की शक्ति उसे हो वही करो ।

यह एक प्रकार प्रयोग करना तुम्हें आ गया अब इसके कार्य का निरूपण करते हैं ।

जिसको इस प्रकार तुमने "मुग्ध" और स्वायत्त करा है वह तुम्हारे आधीन है तुम्हारी आज्ञा मानता है तुम्हारी बात पर बिश्वास करता है । इसी परीक्षा को लोग एक तमाशा सा करते हैं—जैसा कि तुम पात्र से कहो तुम्हारे कपड़े जलते हैं तो वह सचमुच घबड़ा जायगा और कपड़ों को बुझाने की चेष्टा करेगा । तुम कहो "तुम दर्याव में डूब गये हो" तो वह तैरने की चेष्टा करेगा तुम एक कपड़े पर उसे बैठा दो और कहो "तुम इस पर से उतर नहीं सकते" तो वह कभी न उतर सकेगा । तुम उसको मट्टी दो और कहो 'मिश्री है' तो वह उसे मिठास से खायगा । तुम उसे बतासा दो और कहो 'नोन है' वह ऐसा ही मुंह बिगाड़ेगा जैसा रूखे नोन से होता है । यही नहीं है कि तुम्हारे कहने पर बिश्वास मात्र हो परन्तु तुम्हारी और उसकी सब शक्तियें एक होंगी, तुम मीठा खाओ उसे

स्वाद आवेगा। तुम मिरच खाओ उसे चरपराहट लगेगा। तुम्हारे कहीं चिउँटी काटने से उसके कष्ट होगा, * उसकी आंखें बन्द हैं वह तुम्हारी आंखों से देखेगा तुम हाथ में घड़ी वा और जो चीज़ ले लोगे पात्र से पूछो वह यथार्थ वर्णन कर सकेगा। जो भाषा पात्र न जानता हो और प्रयोक्ता जानता हो उस भाषा की पत्र पुस्तकों को प्रयोक्ता अपनी आंखों से देखता रहे पात्र पढ़ता जायगा।

(क) तुम उस से कहो "तू अमुक कमरे में जा" देख वहां मेज पर क्या रक्खा है ? यदि उसको परोक्षदर्शिता प्राप्त है तब तो वह ठीक ठीक कहेगा, नहीं तो प्रयोक्ता के मनमें जो विचार होगा वही कह चलेगा।

(ख) जब वह कमरे का हाल यथार्थ कहेगा तब तुम उसको और शहर में भी भेज सकते हो वह वहां का भी यथार्थ हाल कह सकेगा।

* मेरे एक मित्र ने मुझे दिखाने को प्रयोग किया था उस समय यही सब परीक्षा होती थी पात्र की आंखों में पट्टी बँधी थी कि 'प्रयोक्ता को' जो कुछ खवावे वह न देख सके मैंने पीछे से एक कलम का डंक (और पैनी चीज़ पास न थी) पीठ में चुभा दिया पात्र अपनी पीठ पर उसी स्थान पर हाथ रख कर 'आह' भरने लगा।

(ग) यदि वह वहां तक जाने में असमर्थ है तो नाहीं कर देगा यदि उसको और कुछ आध्यात्मिक बल की इच्छा होगी तो कहेगा आप यह कार्य और कीजिये जैसा मेरे मांथे में और शक्ति संग्रह कर दो, वा अपनी अँगुलिओं से मेरी अँगुली सहला दो वा किसी अंग में इस प्रकार चालना करो इत्यादि इत्यादि ।

(घ) यदि पात्र सच्चरित्र ब्रह्मचारी अलंपट हो और प्रयोक्ता भी ऐसाही हो तो अनेक लोकोपकारमय अलौकिक घटना कर सकता है । 'अमुक पुरुष मर गया है उसका मृत्यु समय कण्ठ रुद्ध था उसका धन कौन से घर में किस दिशा में कितने नीचे पर है । 'अमुक दस्तावेज़ गुम हो गई है दस्तावेज़ किसके पास है ? संवत् तारीख दिखलाओ' । 'अमुक दस्तावेज़ जाल से लिखी गई है उसमें कौन कौन सहायक थे' ।'अमुक रोगी आरोग्य होगा वा नहीं ? ।

(ङ) इस विद्या में अपूर्व चमत्कार यह है कि पात्र को 'मुग्ध' अवस्था में तुम जो अनुरोध करोगे जाग्रत् में भी उसका पात्र पर पूरा पूरा अधिकार रहेगा ।

इसका उदाहरण यह है कि एक प्रयोक्ता ने मद्यप और ज्वारिओं पर बड़े कष्ट से प्रयोग कर उनसे कहा 'तुम मद्य पान कभी मत किया करो' 'जूआ कभी मत खेला

करो' बस उस समय उनके पिता और मित्र हँसते थे कि 'मार मार कर जब उनकी खाल उधेरी, बाँध २ कर लटकाये गये तब तो छोड़ाही नहीं अब इस बेहोशी के कहने से क्या होगा' परन्तु जब उनको जगाया और मद्य पान को कहा गया तब उसकी यह दशा हुई कि मद्य को देख कर आंखें मीच लेते थे और यदि कोई आग्रह कर पिलाता तो मुख से बमन हो जाता कंठ के नीचे न उतरता था। और ज्वारी ने कभी जूआ का नाम भी न लिया। इस से यह निश्चय होता है कि उस मुग्धावस्था में जो कुछ उपदेश होता है वा शिक्षा होती है उसका असर केवल शरीर वा मन परही नहीं परन्तु आत्मा पर होता है अवश्य उस समय मन पर्यन्त का लय हो जाने से शुद्ध आत्मा रह जाती है और आत्मा का स्वरूप ही निर्दोष है इसी से वह उपदिष्ट आत्मा फिर मन शरीर आदि को भी दुष्ट कर्म से रोकता है। हमारे इस अनुमान का दूसरा पूरा प्रमाण यह भी है कि यदि तुम मुग्धावस्था में किसी पात्र को बुरा काम करने की शिक्षा करो तो वह कदापि न मानेगा और यदि विशेष आग्रह करोगे तो उसको स्वप्नावस्था न रहेगी वह घोर निद्रा में हो जायगा तुम्हारा शब्द न सुनेगा और फिर आगे तुम उस पर प्रयोग न कर सकोगे। धन्य है परमेश्वर को कि मनुष्य को जितनी अलौकिक

शक्ति दी हैं वह परोपकार करने से बढ़ती हैं और जब अपकार करना बिचारा तबही नष्ट हो गई । ऐसा न होता तो लोभ क्रोध संकुल संसार में केवल मानसिक शक्तिही से मनुष्य को मनुष्य मार डालता ! हन्त !

अब तुमको पात्र के जगाने की क्रिया और जान लेनी चाहिये परन्तु कुछ यह कठिन नहीं है। "निवर्तक पास" देनेही से होगा जैसा तुमने ऊपर से नीचे को पास दिया था अब उसके बिरुद्ध नीचे से ऊपर को पास दे चलो इसमें इतना समझ लेना पूरा होगा कि अब तुम्हारी अँगुली नीचे को होगी हथेली पात्र के तरफ, और दोनों कनिष्टा मिली होंगी और पैर से मस्तक तक पास दे जाओ परन्तु खूब सावधान रहो कि प्रवर्तक पास न लग जाय इसलिये तुमको फिर समझाये देते हैं कि माथे के पास से दोनों हाथ अलग कर मुट्ठी बाँध कर दोनों बगल से नीचे ले-आओ और पैर के पास मुट्ठी खोलकर फिर नीचे को अँगुली रख कर कनिष्टा दोनों मिलाकर * माथे तक ले जाओ और फिर उसी प्रकार ले आओ । इस समय भी तुमको यह जानना होगा कि पैरही से पास आवश्यक नहीं है नाभि से वा वक्षस्थल से कुछ देना वा कंठ से आ-

* जैसे प्रवर्तक में अँगूठे मिले थे वैसेही ।

रम्भ कर मस्तक तक देना होगा। मूल यह है कि "निवर्तक पास" प्रवर्तक पास का ठीक उलटा रूप है।

जगाने में कभी जल्दी न करो। जगाने के पूर्व उस से कहो 'तुमने जो कुछ देखा है सब भूल जाओ' तब निवर्तक पास दो। यदि भूलने की आज्ञा न देकर जगा दोगे तो वह पागल हो जायगा वा उसको और कोई हृद्रोग हो जायगा।

कभी कभी ऐसा होता है कि पात्र जागना नहीं चाहता है तो आग्रहपूर्वक मत जगाओ और मन में कुछ भय मत करो क्योंकि तुमको याद है तुम्हारे भय करने से पात्र को बड़ा कष्ट होगा यही नहीं परन्तु उसकी मृत्यु होजाना सम्भव है अतः तुम और गम्भीर भाव से कार्य करो तुम्हारे जगाये पात्र न जागे तो उसे स्वच्छन्द सोने दो कुछ काल अनन्तर फिर जगाना। मेरे एक मित्र को एक बेर ऐसा योग लगा कि उनका पात्र २८ घंटे तक सोता रहा।

यह एक प्रकार तुमको प्रयोग करना शिक्षा हो गया, विशेष यह आनुभवकी विद्या है करने से इसके अनेक भेद खुलेंगे जो पुस्तक द्वारा लिख कर नहीं समझाये जा सकते हैं।

शेष में तुमको यह भी बताना आवश्यक है कि जिस तरह से प्रयोक्ता अपनी शक्ति संग्रह कर प्रयोज्य को योग

निद्रा उत्पादन करता है उसी प्रकार केवल प्रयोज्य केही शरीर को शक्ति संग्रह कर उसको मुग्ध करते हैं । इसका भी कुछ प्रकार तुमको सुनाय देते हैं ।

१—एक नौ वर्ष के लड़के को स्नान कराकर फूल की माला पहना कर * उष्ट्रासन (दुज़ानू) से उत्तराभिमुख बैठाओ † और उसके सम्मुख एक ऊँची चौकी पर एक बड़ा दर्पण (जो दो फुट से कम न हो) रक्खो कि जिसमें पात्र अपने मुख के प्रतिबिम्ब को उसमें देख सके । अब तुम पात्र के पीछे खड़े होकर उसको दर्पण में प्रतिबिम्बित अपने नेत्र के ताराओं को एकाग्र भाव से देखने को कहो जब अनुमान १० । १५ । २० मिनट हो जाय तब तुम पश्चिमाभिमुख खड़े होकर अपने दोनों हाथों को (प्रवर्तक पासही कहो) पात्र के मुख से उतार कर छाती तक लाकर दर्पण तक ले जाओ बस थोड़ी देर में उसे योगनिद्रा उत्पन्न होगी ।

---

* इसका प्रयोजन, उसके चित्त की प्रसन्नता और प्रथमही से उधर चित्त के लगावट होने का है।

† इसका तात्पर्य विद्युत्शक्ति की सहायता लेने से है यह शक्ति वह है जिससे दिग्दर्शनी की सूई उत्तरही को मुख करे रहती है।

२—एक साहब यों करते हैं कि, एक जस्त का चक्र (जो डेढ़ दो इञ्च के व्यास का होता है) किञ्चित् निम्नातर (मुहद्दव) हो उसके ठीक बीच में एक तामे का छोटा सा चक्र जड़ा रहता है इसको किसी मनुष्य के बांयें हथेली पर रख देते हैं और उस से (जिसके हाथ पर यह चक्र रक्खा है) उस तामे के छोटे चक्र पर दृष्टि स्थिर करने को कहते हैं जब वह १५।२० मिनट तक उसको देख चुकता है तब अपने दोनों अँगूठों से उसकी दोनों आंख बन्द करते हैं और पलकों को सहलाते हैं और दोनों मुट्ठी इस तरह से बन्द कर जिसमें दोनों तर्जनी (अंगूठे के पास की) अंगुली खुली रहैं उसकी बन्द की हुई दोनों पलकों के पास लेजा कर कुछ देर बैठा कर विद्युत् शक्ति का संग्रह करते हैं * फिर उससे कहते हैं, अब तुम आंख नहीं खोल सकते हो यदि वह खोल दे तो फिर प्रयोग करते हैं। इस पर भी खोल दे तो दूसरे पर परीक्षा करते हैं जब वह न खोल सके वा उनके कहने से खोल सके तब दो चार पास देकर उसे योगनिद्रा उत्पन्न करा देते हैं।

* मनुष्य की अंगुलियों के अग्रभाग से विद्युत् निकला करती है इसका दर्शन प्रयोज्य को अपनी मुग्धावस्था में स्पष्ट होता है।

३—किसी लड़के के नख पर स्याही लगा कर उस पर दृष्टि स्थिर कराकर भी यह दशा उत्पन्न कराते हैं।

४—दीप की शिखा पर दृष्टि स्थिर कराकर भी यह दशा प्रकट होती है। कारण इसका यह है कि चमकीली और काली चमकदार चीज़ में एलेक्ट्रिसिटी (विद्युत् शक्ति) रहती है बस किसी सूक्ष्म * वस्तु पर दृष्टि स्थिर करने से मन एकाग्र होता है और उधर हुआ विद्युदाकर्षण, बस चट यह दशा प्रकाश होती है।

तात्पर्य यह है कि हमारे देश में जो हाजरात करने के नियम प्रचलित हैं वे सब इसी के रूपान्तर मात्र हैं।

इसका परम उत्तम प्रकार यह है कि पात्र की प्रतीक्षा न करनी पड़े पराधीन न रहना पड़े अपने ऊपर आप प्रयोग हो जाय अपने ऊपर योगनिद्रा का स्वप्न प्रगट हो जाय परन्तु यह इतना कठिन है कि अभी समझ में आना असम्भव है परन्तु मूल यह है कि मन के एकाग्र होने से तुमको त्रिकालदर्शिता परोक्षदर्शिता सब प्राप्त हो सक्ती है "परो हि योगो मनसः समाधि" बस मिसमेरिज़्म को

* इसी लिये प्रयोक्ता प्रयोज्य को अपनी आँखें देखने को कहता है। और दर्पण में प्रयोज्य ही की प्रतिबिम्बित पुतली देखने को कहता है।

योग का एक मनोहर चुटकला कहना चाहिये, इस विषय में अधिक अग्रसर होनेही से योगमार्ग में पदार्पण करना होता है योग का सत्व सविस्तर वर्णन करना हमारी इस छोटी सी पुस्तक का उद्देश नहीं है अतः इस प्रकरण को यही समाप्त करते हैं।

द्वितीय भाग।

स्प्रिचुअलिज़म् (भूतविद्या)

यह भी ऊनविंशतिशताब्दी की एक चमत्कार विद्या है, जैसा मुझे मिस्मेरिज़म् में कुछ अभ्यास है इसमें कुछ नहीं है परन्तु एक दो बार चक्र देखा है और पुस्तकें भी देखीं हैं उस देखे सुने से कुछ लिख देते हैं।

१—यह विद्या चक्र के द्वारा सिद्ध होती है।

२—चक्र की यह रीति है कि—चार जन हों अथवा चार से अधिक सात आठ जन तक हों परन्तु चार से कम न हों।

३—इस तरह पर चक्र करना चाहिए कि एक परिष्कार पवित्र एकान्त स्थान में चक्र करना चाहिए।

४—प्रथम धूप धूना जला कर घर को दिव्य कर लेना चाहिए।

५—रात्रिही को चक्र करना अच्छा होगा।

६—यदि बैठक कुर्सियों की हो तो बीच में एक टेविल रख कर सब लोग उसके चारों ओर बैठें।

७—यदि पृथिवी पर बैठना हो तो छोटो चौकी ही बीच में काम देगी।

८—सबको अपने दोनों हाथ उस मध्यवर्तनी चौकी पर रखने चाहियें। सो भी इस प्रकार से कि प्रत्येक का दहिना हाथ प्रत्येक के बायें हाथ पर रहै इसी तरह समस्त चक्र बंध जायगा—तुम्हारा दहिना हाथ तुम्हारे दाहिने ओर बैठे मनुष्य के बांये हाथ पर है उस्का दहिना हाथ उसके दहिने बैठे मनुष्य के बांये हाथ पर है उसका दहिना हाथ उसके दहिने ओर तुम्हारे बांये बैठे के बांये हाथ पर है, जो तुम्हारे बांये बैठा है इसका दहिना हाथ तुम्हारे बांये हाथ पर है बस यह चक्र बन गया यह हम ने चार जन का चक्र कहा है इसी प्रणाली से तुम १२ मनुष्य तक का चक्र कर सकते हो।

९—इस चक्र से परस्पर सब की विद्युत्शक्ति सब के शरीरांतर्चारणी होगी और एक विद्युत्चक्र बन जायगा।

१०—बहुत से लोग शीघ्र शक्ति संचार होने के लिये मध्यवर्तनी चौकी पर सिरकी के समान मोटा लोहे का तार वर्तुल (गोल कर) जड़ देते हैं हाथ रखने की मध्य रेखा उस तार को बनाते हैं।

११—प्रथम कुछ मधुर गान करना चाहिये। यदि तुम्हारे चक्र में किसी को गाना न आता हो तो कमरे के बाहर किसी से कुछ मधुर वाद्य बजवाना चाहिये। इस का तात्पर्य सब के मन को शांत और एकाग्र करने से है।

१२—फिर एक दीयासलाई की पेटी अपने पास रख कर दीया बुझाय देना चाहिये लंप हो तो प्रकाश अत्यन्त क्षीण कर देना चाहिये।

१३—अब सब चक्रस्थ लोग एकनिष्ट होकर संकल्प विकल्प छोड़ यह चिन्ता करें कि कोई परलोक गत आत्मा हमारे चक्र में आवे।

१४—किसी का उद्देश कर के 'कि अमुक पुरुष का आत्मा आवे' चिन्ता न करनी चाहिये, इसमें अनिष्ट होता है, हां जब तुम्हारे चक्र की गति बढ़ जाय तब हठपूर्वक भी किसी की आत्मा को बुला सकते हो।

१५—यदि सब चक्रस्थ लोग न्यारे न्यारे आत्मा के उद्देश से चिन्ता करेंगे तो कुछ भी न होगा।

१६—जब तुम्हारे चक्र में किसी पर आत्मा का आवेश होगा, हाथ कांपने लगेंगे, स्वास दीर्घ होगा गला घर्राने लगेगा।

१७—अब तुम में से एक जन चक्र को भंग न कर अर्थात् अपने दोनों बगल के मनुष्यों के दोनों हाथ अपने दोनों कन्धों पर धर कर हाथ खाली कर दीप प्रकाशित करे।

१८—फिर तुम सब मिल कर कुछ गान करो और थोड़े बिश्राम के अनन्तर प्रश्न करो।

१९—प्रच्छक सच्चरित्र नम्र और मिष्टभाषी होना चाहिये उसी द्वारा सब को अपने प्रश्न करने चाहिये, और किसी को बोलना उचित नहीं है।

२०—प्रथम ही मुख से उत्तराभिलाषा न कर कागज़ पेंसिल हाथ में देकर कहो आप यदि कोई परलोक गत आत्मा हों तो कृपा कर उत्तर लिख दीजे। प्रथम ही प्रायः ८।१० लिखित उत्तर मिलते हैं फिर कुछ परिचय होने पर साक्षात् उत्तर भी मिलता है। उत्तर में बिलम्ब हो तो चपलता न करनी चाहिये यह लड़कों का खेल नही हैं आत्मविद्या है।

२१—कभी कभी कोई दुष्ट आत्मा आकर पात्र को कष्ट देते हैं उनको भगाय देना चाहिये।

२२—भगाने का उपाय यह है कि दीनबन्धु दयामय परमेश्वर का नाम कीर्तन करना और उस के कान में पुकार कर सुनाना।

२३—जैसा दुष्ट आत्मा के प्रवेश से कष्ट होता है ऐसा ही साधु आत्मा के प्रवेश से पात्र को आनन्द होता है।

२४—यदि परलोकागत आत्मा प्रश्न का उत्तर न दे तो औद्धत्य वा मसखरी वा क्षुद्रता, चपलता मत करो आत्मा पर तुम्हारा बलात् अधिकार नही है।

२५—जब तक कोई आत्मा तुम्हारे चक्र में परिचित न हो जाय (दो चार बार न आ जाय) कठिन परीक्षा का प्रश्न मत करो ।

२६—चक्र के अधिवेशन के समय चक्र से भिन्न पुरुषों का वहां न बैठनाही अच्छा है आवेश होने के अनन्तर और लोगों को बुला सकते हो ।

२७—चक्र में स्थान और मनुष्यों को परिवर्तित मत करो ।

मैं अपने एक मित्र के चक्र में गया था । मैंने आत्मा से अनेक प्रश्न किये थे उनके उत्तरों में ईश्वर जीव० प्रेम० साधन० स्वर्ग, निरय: परलोक प्रभृति का बहुतसा तत्त्व जाना गया था परन्तु उसको अप्रासंगिक जान कर यहां नही लिखा ।

इति